Neutral Citation No. - 2010:AHC-LKO:18336-DB

आरक्षित

रिट याचिका संख्या **4529** (एम.बी.) सन् **2003**

के.के. त्रिपाठी

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य

माननीय प्रदीप कांत, न्यायमूर्ति

माननीय शबिहुल हसनैन, न्यायमूर्ति

(निर्णय माननीय न्यायमूर्ति प्रदीप कांत**,** द्वारा दिया गया**)**

यह रिट याचिका जनहित याचिका के रूप में दायर की गई है, जिसमें प्रतिवादी संख्या 6 से 14 तक को उत्तर प्रदेश राज्य विधान परिषद के सदस्य के रूप में नामित किए जाने को चुनौती दी गई है। साथ ही, कुओ- वार्रतो की रिट जारी करने की प्रार्थना की गई है, जिसके तहत उनसे यह पूछा जाए कि वे उत्तर प्रदेश राज्य विधान परिषद के सदस्य होने के लिए किस वैध अधिकार के आधार पर पद पर आसीन हैं। इसके अतिरिक्त, की रिट जारी कर दिनांक 15.05.2003 की विवादित अधिसूचना को निरस्त करने की भी प्रार्थना की गई है, जिसके माध्यम से उपरोक्त प्रतिवादियों को परिषद का सदस्य नामित किया गया था।

प्रारंभ में यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि उपरोक्त नामित सदस्यों का कार्यकाल पहले ही समाप्त हो चुका है, अतः अब न तो सर्टियोरारी की रिट और न ही कुओ- वार्रतो की रिट जारी की जा सकती है। तथापि, पक्षकारों के अधिवक्ताओं ने इस बात पर बल दिया कि उठाए गए प्रश्नों पर विचार आवश्यक है, क्योंकि राज्य विधान परिषद में नामांकन एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है, जिसमें पूर्ण पारदर्शिता तथा ऐसे व्यक्तियों के चयन हेतु स्पष्ट उद्देश्य, दिशा-निर्देश एवं मानदंड निर्धारित किए जाने चाहिए। अतः न्यायालय इस विषय पर अपने विचार व्यक्त कर सकता है।

अतः हम तथ्यों एवं मुद्दों पर केवल उतनी ही सीमा तक विचार कर रहे हैं, जितना इस उद्देश्य के लिए आवश्यक है।

उत्तर प्रदेश राज्य विधान परिषद के दस नामित सदस्यों का कार्यकाल 12.05.2003 को समाप्त हो गया था। उनके स्थान पर परिषद के नौ सदस्यों का नामांकन किया गया, जो वर्तमान रिट याचिका में प्रतिवादी संख्या 6 से 14 तक हैं। राज्य सरकार द्वारा जारी अधिसूचना दिनांक 15.05.2003 की है।

उनके नामांकन को मुख्यतः निम्नलिखित आधारों पर चुनौती दी गई है—

(i) नामांकन, राज्यपाल द्वारा अपने विवेक से, अनुच्छेद 171 के उपखंड (5) के प्रावधानों के अनुसार नहीं किया गया, बल्कि उन्हें राजनीतिक विचारों एवं दलगत आधार पर, सत्तारूढ़ भारतीय जनता पार्टी–बहुजन समाज पार्टी गठबंधन के नामांकित व्यक्तियों को नामित करने के लिए प्रेरित किया गया। वास्तव में, इन नामों का प्रस्ताव मुख्यमंत्री द्वारा किया गया था, न कि मंत्रिपरिषद द्वारा।

(ii) राज्यपाल ने निर्दिष्ट क्षेत्रों में विशिष्ट व्यक्तियों पर विचार करते हुए गुण-दोष के आधार पर निर्णय लेने के बजाय, केवल प्रतिवादी संख्या 4 से 16 के नामों को यथावत स्वीकार कर लिया, जैसा कि इन राजनीतिक दलों द्वारा तय किया गया था।

(iii) प्रतिवादी संख्या 6 से 14 का नामांकन पूर्णतः मनमाना एवं व्यक्तिपरक है, और यह किसी गुण-दोष या वस्तुनिष्ठ मानदंड पर आधारित नहीं है।

(iv) इन प्रतिवादियों को ऐसे व्यक्तियों के रूप में नहीं माना जा सकता, जिनके पास अपने-अपने क्षेत्रों में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव हो। इन्हें सामाजिक सेवा के क्षेत्र में उनके योगदान के आधार पर नामित किया गया

Translated version Not for Legal Use.

अस्वीकरण
"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

बताया गया है, जबकि वास्तविकता में ये केवल राजनेता हैं और किसी भी क्षेत्र, यहाँ तक कि सामाजिक सेवा में भी, इनके पास विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव नहीं है।

(v) यह केवल संयोग नहीं हो सकता कि सभी निजी प्रतिवादियों को सामाजिक सेवा के आधार पर नामित किया गया हो, जबकि उनके द्वारा प्रस्तुत विवरण/जीवन-वृत्त से यह स्पष्ट नहीं होता कि वे सामाजिक सेवा के मानदंड के अंतर्गत नामांकन के योग्य भी हैं।

(vi) सभी नौ सदस्यों का सामाजिक सेवा के कार्य के आधार पर किया गया नामांकन केवल एक आडंबर है, जिसका उद्देश्य सत्तारूढ़ राजनीतिक दलों के गठबंधन के सदस्यों को परिषद में शामिल करना है।

याचिकाकर्ता ने ऐसे व्यक्तियों की एक उदाहरणात्मक सूची भी प्रस्तुत की है, जिन पर विचार किया जा सकता था, जैसे— पद्म पुरस्कार से सम्मानित व्यक्ति, हिंदी संस्थान एवं संस्कृत संस्थान द्वारा साहित्य के क्षेत्र में सर्वोच्च पुरस्कार प्राप्त करने वाले व्यक्ति, पिछले तीन वर्षों में उच्चतम पुरस्कार प्राप्त करने वाले वैज्ञानिक, संगीत नाटक अकादमी एवं ललित कला अकादमी द्वारा उनके सर्वोच्च पुरस्कारों से सम्मानित कलाकार, तथा अन्य अनेक व्यक्ति।

यह भी तर्क दिया गया है कि विडंबना यह है कि साहित्य, विज्ञान और कला के क्षेत्रों के किसी भी विशिष्ट व्यक्ति को उच्च सदन की शोभा बढ़ाने हेतु विचार में नहीं लिया गया। यहाँ तक कि सहकारी आंदोलन और सामाजिक सेवा के क्षेत्र में पद्म पुरस्कार प्राप्त व्यक्तियों को भी अनदेखा एवं उपेक्षित किया गया, जो न तो उचित ठहराया जा सकता है और न ही यह संविधान के अनुच्छेद 171 के अंतर्गत नामांकन के प्रावधान की मंशा के अनुरूप है।

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता श्री एस.एन. शुक्ला ने प्रस्तुत किया कि परिषद में नामांकन हेतु व्यक्तियों के चयन के लिए किसी विशिष्ट दिशा-निर्देश या मानदंड के अभाव में, नामांकन की शक्ति का दुरुपयोग किया जा रहा है, क्योंकि राज्य सरकार ने अपने ज्ञात कारणों से ऐसा कोई मानदंड निर्धारित नहीं किया है। उनका यह भी कहना है कि सत्तारूढ़ दल द्वारा ऐसे दुरुपयोग को रोकने के लिए यह आवश्यक है कि कोई वस्तुनिष्ठ एवं उचित प्रक्रिया तथा मानदंड निर्धारित किए जाएँ, जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय ने पद्म पुरस्कार के मामलों में भी निर्देशित किया है, जहाँ सरकार को व्यापक विवेकाधिकार प्राप्त होता है, जबकि वर्तमान मामले में स्थिति भिन्न है।

इसके अतिरिक्त यह तर्क भी प्रस्तुत किया गया कि संविधान के अनुच्छेद 173(क) के अंतर्गत, कोई व्यक्ति राज्य की विधान सभा या विधान परिषद में सदस्य के रूप में चुने जाने के लिए तब तक पात्र नहीं होगा, जब तक कि वह निर्वाचन आयोग द्वारा अधिकृत व्यक्ति के समक्ष, संविधान की तृतीय अनुसूची में निर्धारित प्रारूप के अनुसार शपथ या प्रतिज्ञान न कर ले। संबंधित अभिलेखों के सूक्ष्म परीक्षण से यह प्रतीत होता है कि यह अनिवार्य आवश्यकता, प्रतिवादी संख्या 6 से 14 के परिषद में नामांकन से पूर्व पूर्ण नहीं की गई थी।

आगे, संविधान के अनुच्छेद 191 के अनुसार, कोई व्यक्ति राज्य की विधान सभा या विधान परिषद का सदस्य बनने या बने रहने के लिए अयोग्य होगा, यदि वह उस अनुच्छेद में उल्लिखित किसी अयोग्यता से ग्रस्त हो। किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादी संख्या 6 से 14 के नामांकन से पूर्व इस संबंध में संबंधित जिला मजिस्ट्रेटों से कोई रिपोर्ट प्राप्त नहीं की गई। अतः, इस बात की पुष्टि किए बिना कि संबंधित व्यक्ति अनुच्छेद 191 के अंतर्गत किसी अयोग्यता से ग्रस्त नहीं हैं, उनका नामांकन नहीं किया जाना चाहिए था और यह विधि की दृष्टि में टिकाऊ नहीं है।

हालाँकि, यह आपत्ति कि निजी प्रतिवादियों का नामांकन अनुच्छेद 191 के अंतर्गत आवश्यक जांच किए बिना किया गया या उन्होंने अनुच्छेद 173(क) के प्रावधानों के विरुद्ध शपथ ली, उनके कार्यकाल के समाप्त हो जाने के कारण अब प्रासंगिक नहीं रह जाती है। तथापि, भविष्य में किसी अयोग्य व्यक्ति के परिषद में नामांकन से बचने हेतु यह उचित होगा कि प्रस्तावित अभ्यर्थियों के नामांकन पर विचार करने से पूर्व, उनके संबंध में जिला मजिस्ट्रेट से रिपोर्ट प्राप्त कर ली जाए।

हालाँकि, संविधान के अनुच्छेद 173(क) के अंतर्गत शपथ ग्रहण को विधान परिषद के सदस्य के नामांकन के मामले में अनिवार्य आवश्यकता नहीं माना जा सकता, क्योंकि ऐसी कोई अनिवार्यता न तो अनुच्छेद 173(क) के प्रावधानों से और न ही तृतीय अनुसूची में निर्धारित प्रपत्र की विषयवस्तु से उत्पन्न होती है।

सदस्यों के विधान परिषद में नामांकन करते समय राज्यपाल द्वारा प्रयुक्त शक्ति की प्रकृति के संबंध में विस्तृत तर्क प्रस्तुत किए गए हैं, अर्थात् क्या राज्यपाल इस शक्ति का प्रयोग अपने विवेक से

Translated version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण
"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

करते हैं या मंत्रिपरिषद की सहायता एवं सलाह पर कार्य करते हैं, और यदि ऐसा है तो इन दोनों स्थितियों में न्यायिक पुनरावलोकन की सीमा क्या होगी।

एक अन्य तर्क यह भी प्रस्तुत किया गया कि वर्तमान मामले में राज्यपाल ने मंत्रिपरिषद की सहायता एवं सलाह पर कार्य नहीं किया, बल्कि वास्तव में मुख्यमंत्री की इच्छा का ही पालन किया गया है।

प्रस्तुत तर्कों के आधार पर, विचारार्थ आवश्यक बिंदुओं को निम्न प्रकार संक्षेपित किया जा सकता है—

(i) क्या राज्यपाल, संविधान के अनुच्छेद 171 के उपखंड (5) के अंतर्गत विधान परिषद के सदस्यों के नामांकन की अपनी शक्ति का प्रयोग अपने व्यक्तिगत विवेक से करते हैं, या उन्हें यह शक्ति मंत्रिपरिषद की सहायता एवं सलाह के आधार पर प्रयोग करनी होती है;

(ii) क्या मुख्यमंत्री अपने स्तर पर, मंत्रिपरिषद से परामर्श किए बिना, विधान परिषद के सदस्यों के नामांकन के लिए प्रस्ताव कर सकते हैं;

(iii) क्या बड़ी संख्या में सदस्यों (वर्तमान मामले में नौ सदस्य) का नामांकन केवल एक ही क्षेत्र से किया जा सकता है, जैसा कि यहाँ किया गया है, जहाँ सभी सदस्यों को सामाजिक सेवा के क्षेत्र में उनके व्यावहारिक अनुभव के आधार पर नामित किया गया है।

राज्य की ओर से उपस्थित श्री जे.एन. माथुर ने उचित रूप से यह प्रस्तुत किया कि विधान परिषद के सदस्यों के नामांकन के मामले में राज्यपाल द्वारा प्रयोग किए जाने वाले विवेक की प्रकृति चाहे जो भी हो, न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति केवल इस सीमा तक ही विस्तारित हो सकती है कि यह देखा जाए कि नामित सदस्य किसी अयोग्यता से ग्रस्त तो नहीं हैं या वे नामांकन के लिए अयोग्य तो नहीं थे।

उन्होंने आगे यह भी कहा कि राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा संविधान के अंतर्गत अपने कर्तव्यों के निर्वहन करते समय विवेकाधिकार के प्रयोग की सीमा, परिधि एवं विस्तार के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय ने शमशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य ***(***एआईआर ***1974*** एससी ***2192)*** के मामले में विस्तृत रूप से विचार किया है, और वही सिद्धांत उस स्थिति में भी समान रूप से लागू होंगे, जब राज्यपाल विधान परिषद के किसी सदस्य का नामांकन करते हैं।

यदि नामित सदस्य अयोग्य हों या नामांकन के लिए किसी प्रकार की अयोग्यता से ग्रस्त हों, तो निस्संदेह न्यायालय को ऐसे नामांकन को निरस्त करने का अधिकार होगा। अतः यह आवश्यक नहीं है कि राज्यपाल द्वारा सदस्यों के नामांकन की शक्ति की प्रकृति पर विस्तार से विचार किया जाए, अर्थात् यह कि वह शक्ति राज्यपाल के व्यक्तिगत विवेक से प्रयोग की जानी है या मंत्रिपरिषद की सहायता एवं सलाह पर।

यहाँ यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि संविधान के अनुच्छेद 163 के अंतर्गत राज्यपाल को अपने कर्तव्यों का निर्वहन मंत्रिपरिषद की सहायता एवं सलाह पर, जिसके प्रमुख मुख्यमंत्री होते हैं, करना होता है; सिवाय उन परिस्थितियों के, जहाँ संविधान द्वारा या उसके अंतर्गत उन्हें अपने विवेक से कार्य करने की अपेक्षा की गई हो।

इस प्रकार, अनुच्छेद 163 के प्रावधानों के अनुसार राज्यपाल को अपने विवेक का प्रयोग करने की शक्ति प्राप्त है और वे नामांकन से संबंधित प्रस्ताव को मंत्रिपरिषद के पास पुनर्विचार हेतु भेज सकते हैं।

शमशेर सिंह बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य (उपर्युक्त) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ ने यह प्रतिपादित किया कि राष्ट्रपति तथा राज्यपाल, कार्यपालिका संबंधी कार्यों में मंत्रिपरिषद की सहायता एवं सलाह पर कार्य करते हैं और उन्हें व्यक्तिगत रूप से, मंत्रिपरिषद की सहायता एवं सलाह के बिना या उसके विरुद्ध कार्य करने की आवश्यकता संविधान द्वारा नहीं दी गई है। जहाँ राज्यपाल को विवेकाधिकार प्राप्त हैं, वहाँ वे अपने स्वतंत्र निर्णय से कार्य करते हैं, किंतु यह विवेक भी मंत्रिपरिषद के साथ सामंजस्य में प्रयोग किया जाता है।

उक्त मामले में माननीय न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने निम्नलिखित कहा—

> *"हम अपने संविधान की इस शाखा के संबंध में यह विधि घोषित करते हैं कि राष्ट्रपति और राज्यपाल, जो विभिन्न अनुच्छेदों के अंतर्गत सभी कार्यपालिका एवं अन्य शक्तियों के संरक्षक हैं, वे इन प्रावधानों के अनुसार अपनी औपचारिक संवैधानिक शक्तियों का प्रयोग केवल और केवल अपने मंत्रियों की सलाह पर तथा उसी के अनुरूप करेंगे, सिवाय कुछ प्रसिद्ध अपवादात्मक परिस्थितियों के।"*

अस्वीकरण
"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

Translated Version - Not for Legal Use.

राज्य की कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित होती है, जिसका प्रयोग वे संविधान के अनुच्छेद 154 के अंतर्गत स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के माध्यम से कर सकते हैं।

हम राज्य के अधिवक्ता श्री जे.एन. माथुर द्वारा प्रस्तुत तर्कों से सहमत हैं कि राज्यपाल द्वारा विवेकाधिकार का प्रयोग—चाहे वह स्वयं किया गया हो या मंत्रिपरिषद की सहायता एवं सलाह पर—न्यायिक पुनरावलोकन के अधीन केवल इस सीमा तक होगा कि यह परखा जा सके कि जिन व्यक्तियों का नामांकन किया गया है, वे अयोग्य तो नहीं हैं या किसी अयोग्यता से ग्रस्त तो नहीं हैं। यदि ऐसा पाया जाता है, तो ऐसे नामांकन को चुनौती दी जा सकती है तथा उन्हें निरस्त एवं रद्द किया जा सकता है।

अतः, वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में, हम इस बहस में प्रवेश करना उचित नहीं समझते कि राज्यपाल द्वारा नामांकन करते समय विवेकाधिकार की प्रकृति क्या है। तथापि, हम यह अवश्य स्पष्ट करते हैं कि यदि राज्यपाल को अपने व्यक्तिगत विवेक से नामांकन करना हो, तो वे अपनी संतुष्टि के आधार पर ऐसा कर सकते हैं। और यदि यह मान भी लिया जाए कि यह विवेक मंत्रिपरिषद की सहायता एवं सलाह पर प्रयोग किया जाना है, तब भी राज्यपाल को यह अधिकार है कि वे कुछ या सभी नामों के प्रस्ताव को अपने सुझावों सहित मंत्रिपरिषद को पुनर्विचार हेतु वापस भेज सकते हैं। यहाँ तक कि यदि नाम मुख्यमंत्री द्वारा व्यक्तिगत रूप से प्रस्तावित किए गए हों, तब भी राज्यपाल को यह अधिकार होगा कि वे उस विषय को मंत्रिपरिषद के विचारार्थ भेजें।

श्री एस.एन. शुक्ला ने न्यायालय का ध्यान मुख्यमंत्री द्वारा राज्यपाल को भेजी गई संस्तुतियों तथा अभ्यर्थियों (निजी प्रतिवादियों) के योग्यता/जीवन-वृत्त की ओर आकर्षित किया, यह दर्शाने के लिए कि अधिकांश मामलों में केवल औपचारिक रूप से सामाजिक सेवा का उल्लेख किया गया है, बिना किसी वास्तविक प्रमाण, ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव के। उनके अनुसार, ये ऐसे व्यक्ति हैं जो चुनाव के माध्यम से प्रवेश प्राप्त नहीं कर सके, और इसलिए उन्हें सत्तारूढ़ दलों के गठबंधन द्वारा सामाजिक सेवा के नाम पर पिछला दरवाजा देकर परिषद में शामिल किया गया है।

संविधान का अनुच्छेद 171, जो विधान परिषद की संरचना से संबंधित है, उसके उपखंड (इ) में सदस्यों के नामांकन का प्रावधान किया गया है। अनुच्छेद 171 के उपखंड (इ) का प्रावधान इस प्रकार है—

> "(इ) शेष सदस्यों का नामांकन राज्यपाल द्वारा उपखंड (5) के प्रावधानों के अनुसार किया जाएगा।"

उपरोक्त अनुच्छेद 171 की उपधारा (5) में यह प्रावधान है कि उपधारा (3) के उपखंड (e) के अंतर्गत राज्यपाल द्वारा नामित किए जाने वाले सदस्य ऐसे व्यक्तियों में से होंगे, जिनके पास निम्नलिखित क्षेत्रों में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव हो— (i) साहित्य, (ii) विज्ञान, (iii) कला, (iv) सहकारी आंदोलन, तथा (v) सामाजिक सेवा।

अतः उपधारा (5) विधान परिषद में नामांकन हेतु एक विशेष वर्ग के सदस्यों का निर्धारण करती है, जिनके पास इन क्षेत्रों में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव हो। इस प्रकार, नामांकन ऐसे किसी भी व्यक्ति का किया जा सकता है, जिसके पास साहित्य, विज्ञान आदि जैसे मान्यता प्राप्त क्षेत्रों में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव हो; अर्थात् 'विधि' जैसे अन्य मान्यता प्राप्त क्षेत्रों में भी।

ऐसे सदस्यों का नामांकन अत्यंत महत्वपूर्ण और सार्थक है। सामान्यतः राजनेता या राजनीति में विश्वास रखने वाले व्यक्ति चुनाव लड़कर, जनता का सामना करते हुए, विधान सभा या परिषद में प्रवेश करते हैं। किन्तु ऐसे अनेक व्यक्ति भी होते हैं, जिनका योगदान परिषद की विचार-विमर्श प्रक्रिया में अत्यंत उपयोगी हो सकता है, परंतु वे न तो चुनाव लड़ना चाहते हैं और न ही स्वयं को राजनेता के रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं। ऐसे व्यक्तियों के पास विशेष ज्ञान एवं कौशल होता है, अतः उनकी उपस्थिति न केवल सदन की गरिमा बढ़ाती है, बल्कि बहसों के स्तर को भी ऊँचा उठाती है तथा राज्य एवं देश को उनके ज्ञान का लाभ महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा के दौरान प्राप्त होता है।

यह निर्विवाद है कि राज्य विधान परिषद में सदस्यों के नामांकन का प्रावधान एक स्पष्ट उद्देश्य और प्रशंसनीय मंशा के साथ किया गया है, ताकि अत्यधिक ज्ञान, अनुभव एवं विशिष्टता वाले व्यक्तियों को भी परिषद में सम्मिलित किया जा सके। इसी उद्देश्य से, संविधान के अनुच्छेद 171(5) के अंतर्गत राज्यपाल को ऐसे सदस्यों के नामांकन का विवेकाधिकार प्रदान किया गया है। राज्यपाल, जो एक निष्पक्ष एवं गैर-राजनीतिक पद धारण करते हैं, को यह अधिकार है कि वे किसी भी पात्र व्यक्ति को उक्त प्रावधान के अंतर्गत विधान परिषद का सदस्य नामित करें। ऐसा करते समय यह स्पष्ट है कि उन्हें यह सुनिश्चित करने हेतु अपने विवेक का प्रयोग करना होगा कि प्रस्तावित व्यक्ति नामांकन के लिए पात्र हैं। अतः राज्यपाल के लिए यह खुला है कि वे मुख्यमंत्री द्वारा किए गए प्रस्ताव में, किसी उचित एवं तर्कसंगत आधार पर संशोधन सुझाएँ और मामले को पुनर्विचार हेतु मंत्रिपरिषद के पास भेजें।

अस्वीकरण
"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने दिनांक 19.11.2003 के प्रत्युत्तर हलफनामे के पैरा 8 की ओर न्यायालय का ध्यान आकर्षित करते हुए यह बल दिया कि तत्कालीन राष्ट्रपति ने राज्यसभा के सदस्यों के नामांकन के प्रस्ताव को इस आधार पर वापस कर दिया था कि सभी नामांकन 'सामाजिक सेवा' के क्षेत्र से ही प्रस्तावित किए गए थे। इस तथ्य का प्रतिवादियों द्वारा खंडन नहीं किया गया है। अतः इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि राज्यपाल को यह प्रतीत होता है कि प्रस्तावित व्यक्तियों में आवश्यक पात्रता का अभाव है या नामांकन निष्पक्ष एवं युक्तिसंगत तरीके से नहीं किया गया है—अर्थात् भले ही नामांकन संविधान के प्रावधानों के प्रत्यक्ष उल्लंघन में न हो, परंतु वह उसके वास्तविक उद्देश्य एवं भावना के अनुरूप न हो—तो राज्यपाल को यह अधिकार है कि वे ऐसे प्रस्ताव पर आपत्ति करते हुए सुझाव दें तथा मामले को पुनर्विचार हेतु मंत्रिपरिषद को वापस भेजें।

राज्यसभा में नामित सदस्यों के महत्व एवं ऐसे प्रावधान की युक्तिसंगतता का विरोध संविधान में इस प्रावधान को सम्मिलित करते समय भी किया गया था, जैसा कि 3.1.1949 को श्री लक्ष्मीनारायण साहू (उड़ीसा: सामान्य) द्वारा दिए गए भाषण से स्पष्ट होता है। संविधान सभा की बहस के अनुच्छेद 61 (जो वर्तमान अनुच्छेद 80 के समतुल्य है) दिनांक 3.1.1949, भाग-I से उद्धरण निम्नलिखित है—

> "यदि हम राष्ट्रपति को इन बारह सदस्यों को नामित करने का अधिकार देंगे, तो उन पर अनेक लोगों द्वारा पक्षपात के आरोप लगाए जाएंगे। लोग शिकायत करेंगे कि योग्य एवं सक्षम व्यक्तियों को नामित करने के बजाय, राष्ट्रपति ने अपने पसंदीदा व्यक्तियों को नामित किया है। मुझे आशंका है कि राष्ट्रपति को इस प्रकार की अनुचित आलोचना का सामना सदैव करना पड़ेगा। यह स्पष्ट है कि यह अत्यंत अवांछनीय स्थिति होगी कि हमारे राष्ट्र के नेता, हमारे गणराज्य के सर्वोच्च प्रमुख को इस प्रकार अनुचित आलोचना का विषय बनाया जाए। अतः मैं निवेदन करता हूँ कि नामांकन का यह प्रावधान समाप्त कर दिया जाए और उसके स्थान पर कार्यात्मक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की जाए। कुछ लोगों का कहना है कि कार्यात्मक प्रतिनिधित्व का प्रयोग आयरलैंड में किया गया था और वह असफल सिद्ध हुआ, किंतु मेरा निवेदन है कि यदि इसे पैनल प्रणाली के साथ लागू किया जाए, तो यह अवश्य सफल होगा। मैं नामांकन प्रणाली के विरुद्ध अधिक कुछ कहना आवश्यक नहीं समझता, परंतु इस संदर्भ में मैं आपका ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ कि हाल तक हम, भारत की विधान सभाओं एवं परिषदों के सदस्य, एक व्यक्ति—महात्मा गांधी—के पास सलाह के लिए जाते थे और उनके परामर्श के अनुसार अपने कार्यों का संचालन करते थे। यदि आज भी कोई व्यक्ति महात्मा गांधी के समान महान हो, जिसके लिए यह नामांकन प्रणाली बनाई जा रही है, और जो चुनाव के माध्यम से आने के इच्छुक न हो, तो हम उसके पास जाकर सलाह ले सकते हैं। यदि कोई अत्यंत विद्वान या ज्ञानवान व्यक्ति चुनाव लड़ने के लिए इच्छुक नहीं है, तो मैं व्यक्तिगत रूप से यह कह सकता हूँ कि मैं उसके पास जाकर उसकी सलाह लेने में कोई संकोच नहीं करूँगा। जिस प्रकार हम महात्मा गांधी से सलाह लेते थे, उसी प्रकार हम किसी भी योग्य एवं सक्षम व्यक्ति से सलाह ले सकते हैं। हम ऐसे योग्य एवं विद्वान व्यक्तियों का एक सलाहकार बोर्ड भी गठित कर सकते हैं, जो हमें मार्गदर्शन दे। रूस में सलाहकार बोर्ड की व्यवस्था विद्यमान है। हम प्रत्येक मंत्री के लिए ऐसा सलाहकार बोर्ड बना सकते हैं। यदि हम ऐसा करने के बजाय राष्ट्रपति को बारह व्यक्तियों को नामित करने का अधिकार देंगे, तो उन पर पक्षपात एवं भाई-भतीजावाद के गंभीर आरोप लगाए जाएंगे, जो उचित नहीं होगा। अतः मैं प्रस्ताव करता हूँ कि नामांकन का यह प्रावधान पूर्णतः समाप्त कर दिया जाए। इन्हीं शब्दों के साथ मैं अपनी बात समाप्त करता हूँ।"

यह दर्शाता है कि संविधान निर्माताओं को इस बात का पूर्ण ज्ञान था कि राज्यसभा के सदस्यों के नामांकन के समय राष्ट्रपति के विरुद्ध अनुचित आलोचना की जा सकती है। इसलिए, न्यायालय को भी, जब न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का प्रयोग करते हुए पक्षकारों द्वारा ऐसे आरोप लगाए जाएँ, तो अत्यंत सावधानी बरतनी चाहिए।

राज्यसभा की प्रैक्टिस और प्रोसीजर सीरीज की एक पुस्तिका, जो जनवरी 1999 में प्रकाशित हुई, में वर्ष 1952 से 1997 तक अनुच्छेद 80 के अंतर्गत राज्यसभा में नामित किए गए विशिष्ट व्यक्तियों के नामों का उल्लेख किया गया है। इनमें विद्वान एवं शिक्षाविद् डॉ. जाकिर हुसैन, प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. कालिदास नाग एवं डॉ. राधा कुमुद मुखर्जी, गांधीवादी लेखक काकासाहेब कालेलकर, प्रख्यात वैज्ञानिक प्रोफेसर सत्येंद्रनाथ बोस, समाजसेवी श्री एन.आर. मलकानी, शास्त्रीय नृत्य की प्रसिद्ध विदुषी श्रीमती रुक्मिणी देवी अरुंडेल, गांधीवादी विद्वान एवं शिक्षक डॉ. जे.एम. कुमारप्पा, विधि विशेषज्ञ डॉ. अल्लादी कृष्णस्वामी, प्रसिद्ध रंगमंच एवं फिल्म अभिनेता श्री पृथ्वीराज कपूर तथा प्रतिष्ठित चिकित्सा वैज्ञानिक मेजर जनरल एस.एस. सोखे जैसे व्यक्तित्व शामिल थे।

इसमें कहा गया है कि संविधान के अनुच्छेद 80 के अंतर्गत राज्यसभा का गठन अधिकतम 250 सदस्यों से होता है, जिनमें से 12 सदस्यों को राष्ट्रपति द्वारा उन व्यक्तियों में से नामित किया जाता है,

अस्वीकरण
"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

जिनके पास साहित्य, विज्ञान, कला और सामाजिक सेवा जैसे क्षेत्रों में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव होता है। राज्यसभा में नामांकन के सिद्धांत को अपनाकर संविधान ने यह सुनिश्चित किया है कि राष्ट्र को देश के सबसे विशिष्ट एवं प्रतिभाशाली व्यक्तियों की सेवाएँ भी प्राप्त हों, जो समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इन नामित सदस्यों के संबंध में यह भी कहा जा सकता है कि वे अपने-अपने क्षेत्रों में विशिष्ट पहचान एवं उपलब्धि प्राप्त करने वाले व्यक्ति होते हैं, और उन्हें राज्यसभा में नामित कर राज्य उनके गुणों को मान्यता देता है तथा उनका सम्मान करता है। ऐसे अनेक व्यक्तित्व चुनाव की कठिन एवं प्रतिस्पर्धात्मक प्रक्रिया से गुजरना पसंद नहीं करते।

लोकसभा में 13 मई 1953 को दिए गए पंडित जवाहरलाल नेहरू के भाषण में नामित सदस्यों के संबंध में निम्नलिखित कहा गया है—

> "...राष्ट्रपति ने राज्यसभा राज्य के अधिवक्ता के कुछ सदस्यों को नामित किया है, जो—यदि मैं ऐसा कहूँ—संपूर्ण संसद के सदस्यों में अत्यंत विशिष्ट हैं। यह सत्य है कि वे कला, विज्ञान आदि क्षेत्रों में विशिष्ट हैं—और हमारे संविधान ने अपनी बुद्धिमत्ता से ऐसा प्रावधान किया है। वे किसी राजनीतिक दल या अन्य किसी चीज़ का प्रतिनिधित्व नहीं करते, बल्कि वे वास्तव में साहित्य, कला, संस्कृति अथवा अन्य क्षेत्रों की सर्वोच्च उपलब्धियों का प्रतिनिधित्व करते हैं।"

उक्त पुस्तिका में नामित सदस्यों की सूची से यह स्पष्ट होता है कि इन नामित सदस्यों में विधिवेत्ता, शिक्षाविद्, इतिहासकार, वैज्ञानिक, कवि एवं साहित्यकार, अभियंता, अर्थशास्त्री, प्रशासक तथा सिद्ध क्षमता एवं उत्कृष्ट योग्यता वाले समाजसेवी शामिल रहे हैं।

पुस्तिका में आगे यह भी कहा गया है कि इन नामित सदस्यों ने निःसंदेह सदन की बहसों के स्तर को ऊँचा उठाया है। उन्होंने अपनी रुचि के विषयों पर चर्चाओं में भाग लेकर तथा राष्ट्रीय महत्व के मुद्दों पर विचार-विमर्श में योगदान देकर सदन की कार्यवाही को समृद्ध किया है। सदन ने सदैव उन्हें अत्यंत ध्यानपूर्वक सुना है और उनके संतुलित विचारों एवं विचारशील सुझावों से निरंतर लाभान्वित हुआ है।

द्वितीय सदन की आवश्यकता एवं महत्व पर 28 जुलाई 1947 को संविधान सभा में श्री एन. गोपालस्वामी अय्यंगार ने कहा—

> "……इस द्वितीय सदन के अस्तित्व से वास्तव में हम यह प्राप्त करते हैं कि यह एक ऐसा माध्यम बनता है, जिसके द्वारा हम उन कार्यों को, जो संभवतः जल्दबाजी में किए जा सकते हैं, कुछ समय के लिए रोक सकें। साथ ही, यह ऐसे अनुभवी व्यक्तियों को अवसर प्रदान करता है, जो राजनीतिक प्रतिस्पर्धा के बीच में सक्रिय नहीं होते, किंतु अपने ज्ञान एवं महत्व के साथ बहस में भाग लेने के इच्छुक होते हैं—ऐसा स्तर, जिसे हम सामान्यतः लोकसभा के साथ नहीं जोड़ते।"

नामित सदस्य, जो उत्कृष्ट योग्यता एवं विशिष्टता रखते हैं, वास्तव में राज्यसभा की महत्ता, गौरव एवं गरिमा को बढ़ाते हैं और इसे ऐसा सदन बनाते हैं, जो राष्ट्रीय महत्व के विषयों पर शांतिपूर्ण एवं गहन विचार करता है।

प्रतिवादी संख्या 6 से 14, जिन्हें राज्यपाल द्वारा नामित किया गया, सभी को सामाजिक सेवा के क्षेत्र में योगदानकर्ता बताया गया है। रिट याचिका में यह स्पष्ट आरोप लगाया गया है कि प्रतिवादी संख्या 7, 9 एवं 10 के जीवन-वृत्त से सामाजिक सेवा के क्षेत्र में कोई वास्तविक ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव नहीं झलकता, तथा प्रतिवादी संख्या 6, 8 एवं 12 के जीवन-वृत्त एक जैसे प्रतीत होते हैं।

अब हमारे लिए यह विचार करना प्रासंगिक नहीं है कि उक्त प्रतिवादियों को सामाजिक सेवा के क्षेत्र में उनके योगदान के आधार पर नामित किया जा सकता था या नहीं, क्योंकि उनका कार्यकाल समाप्त हो चुका है। तथापि, उनके तथाकथित उपलब्धियों को देखते हुए हम यह कहने के लिए प्रेरित हैं कि राज्य विधान परिषद में सदस्यों का नामांकन वास्तव में अत्यंत महत्वपूर्ण एवं जिम्मेदारीपूर्ण कार्य है, जिसे इस प्रकार सहज या लापरवाही से नहीं किया जाना चाहिए।

उक्त प्रावधान संविधान में राजनीतिक इच्छाओं की पूर्ति करने या राजनेताओं के सपनों को साकार करने के लिए नहीं जोड़ा गया है, और न ही इसका उद्देश्य सदन में सत्तारूढ़ दल के सदस्यों की संख्या बढ़ाना है। बल्कि, यह प्रावधान—कुछ विरोध के बावजूद—इस उद्देश्य से सम्मिलित किया गया था कि समाज के विभिन्न क्षेत्रों में उल्लेखनीय योगदान देने वाले विशिष्ट व्यक्तियों के ज्ञान एवं अनुभव का लाभ प्राप्त किया जा सके।

अनुच्छेद 171 की उपधारा (5) के अंतर्गत पात्रता का मानदंड यह है कि साहित्य, विज्ञान, कला, सहकारी आंदोलन एवं सामाजिक सेवा जैसे क्षेत्रों में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव रखने वाले

Translated version - Not for Legal Use

अस्वीकरण
"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

व्यक्तियों को राज्यपाल द्वारा नामित किया जा सकता है। उपधारा (3) के उपखंड (e) का यह आवश्यक तात्पर्य है कि नामित व्यक्ति के पास उपधारा (5) में वर्णित विषयों में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव होना चाहिए। उक्त उपधारा (5) में प्रयुक्त शब्द का अर्थ यह भी है कि साहित्य, विज्ञान, कला, सहकारी आंदोलन एवं सामाजिक सेवा के अतिरिक्त अन्य समान क्षेत्रों में भी यदि किसी व्यक्ति के पास विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव है, तो वह भी नामांकन के लिए पात्र हो सकता है—जैसे विधिवेत्ता अर्थशास्त्री या चिकित्सा क्षेत्र के विशेषज्ञ आदि।

जब संविधान ने विभिन्न क्षेत्रों में विशेष ज्ञान या अनुभव रखने वाले व्यक्तियों के नामांकन के लिए इतना व्यापक क्षेत्र निर्धारित किया है, तो सामान्यतः यह उचित नहीं होगा कि सभी सदस्यों का नामांकन केवल एक ही क्षेत्र—जैसे कि इस मामले में सामाजिक सेवा—से किया जाए, जब तक कि इसके लिए कोई विशेष कारण न हो, जैसे कि अन्य क्षेत्रों में कोई योग्य व्यक्ति उपलब्ध न हो।

इस प्रकार, विधान परिषद में नामित सदस्यों को शामिल करने का मूल उद्देश्य विभिन्न क्षेत्रों के ऐसे व्यक्तियों की सेवाएँ, मार्गदर्शन एवं ज्ञान प्राप्त करना था, न कि उन राजनेताओं को "पिछले दरवाजे" से प्रवेश देना, जो चुनाव के माध्यम से प्रवेश प्राप्त नहीं कर सके, और न ही किसी राजनीतिक दल की सदस्य संख्या बढ़ाने के लिए।

यह एक अलग विषय हो सकता है कि किसी विशेष मामले में यदि सभी नामित सदस्य एक ही क्षेत्र से हों, तो न्यायालय ऐसे नामांकन में हस्तक्षेप करे या न करे—यह न्यायिक पुनरावलोकन की सीमा को ध्यान में रखते हुए तय किया जाएगा, क्योंकि वे किसी न किसी श्रेणी में आते हैं। परंतु प्रारंभिक स्तर पर यह विचार करना राज्यपाल, तथा साथ ही मुख्यमंत्री और मंत्रिपरिषद का दायित्व है कि आखिर क्यों सभी सदस्यों का नामांकन केवल एक ही क्षेत्र, वह भी 'सामाजिक सेवा' से किया जा रहा है।

किसी विशेष राजनीतिक दल के उन सदस्यों को, जो चुनाव में प्रवेश प्राप्त नहीं कर सके और जिनके पास संविधान की उपधारा (5) के अर्थ में कोई विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव नहीं है, नामित करना संविधान के प्रावधानों की वास्तविक मंशा एवं भावना के अनुरूप नहीं है, और ऐसे व्यक्तियों का नामांकन नहीं किया जाना चाहिए।

सभी व्यक्तियों का केवल एक ही क्षेत्र से नामांकन करना, अनुच्छेद 171 की उपधारा (5) की वास्तविक भावना एवं उद्देश्य के विपरीत है। यद्यपि यह आवश्यक नहीं कि यह अवैध ही हो, परंतु इससे अन्य क्षेत्रों के विशिष्ट व्यक्तियों को अवसर से वंचित किया जाता है, जो अन्यथा परिषद की शोभा बढ़ा सकते थे और अपनी प्रतिभा, व्यक्तित्व, ज्ञान एवं बुद्धिमत्ता से परिषद को समृद्ध कर सकते थे। यह भी न तो माना जा सकता है और न ही अनुमान लगाया जा सकता है—जैसा कि याचिकाकर्ता ने विभिन्न क्षेत्रों के व्यक्तियों के नाम प्रस्तुत कर दर्शाया है—कि सामाजिक सेवा के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में कोई योग्य व्यक्ति उपलब्ध नहीं था, जिसे राज्यपाल द्वारा नामित किया जा सकता था।

यह सत्य है कि सामान्यतः उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत यह नहीं देखता कि जिन व्यक्तियों का नामांकन हुआ है या हो सकता था, उनकी योग्यता क्या है, और इस संबंध में याचिकाकर्ता का यह तर्क कि न्यायालय ऐसी जांच कर सकता है, स्वीकार नहीं किया जा सकता। किंतु यह भी उतना ही सत्य है कि यह मूलतः राज्यपाल, मुख्यमंत्री तथा मंत्रिपरिषद की जिम्मेदारी है कि वे यह सुनिश्चित करें कि नामांकन से संबंधित उपधारा का उद्देश्य, मंशा एवं भावना वास्तविक रूप में लागू हो। संवैधानिक प्रावधानों का पालन किया जाना चाहिए, उनका सम्मान किया जाना चाहिए तथा उन्हें उनके वास्तविक अर्थ में लागू किया जाना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति, जिसे संविधान के प्रावधानों को लागू करने का अधिकार एवं दायित्व सौंपा गया है, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उन प्रावधानों को दरकिनार करता है या उन्हें इस प्रकार लागू करता है जिससे उनके उद्देश्य, मंशा एवं भावना ही विफल हो जाए, तो न्यायालय अपने न्यायिक पुनरावलोकन के अधिकार से वंचित नहीं होगा, यद्यपि यह अधिकार निर्धारित सीमाओं के भीतर ही प्रयोग किया जाएगा।

हर शरण वर्मा बनाम चंद्र भान गुप्ता *(*एआईआर ***1962*** इलाहाबाद ***301)*** के मामले में, न्यायालय ने इस तर्क को अस्वीकार करते हुए कि श्री चंद्र भान गुप्ता, जो राज्य के मुख्यमंत्री रह चुके थे और उत्तर प्रदेश की राजनीति में कई वर्षों तक सक्रिय रहे थे, सामाजिक सेवा के क्षेत्र में कोई व्यावहारिक अनुभव नहीं रखते थे, निम्नलिखित कहा—

> "इन प्रावधानों के मूल सिद्धांत का मेल इस बात से नहीं बैठता कि मंत्रिपरिषद में ऐसे व्यक्ति शामिल हों, जिन्हें राज्यपाल द्वारा विधानमंडल में नामित किया गया हो। मंत्रिपरिषद का प्रत्येक सदस्य, जो सामूहिक रूप से विधानमंडल के प्रति उत्तरदायी होता है, संविधान के अनुसार यह अपेक्षा की जाती है कि वह चुनाव के माध्यम से विधानमंडल में प्रवेश करे, न कि नामांकन के 'पिछले दरवाजे' से। किसी ऐसे मंत्री की नियुक्ति, जो निर्वाचित नहीं है बल्कि जिसका विधानमंडल में सदस्यता का आधार राज्यपाल द्वारा किया गया नामांकन है, हमारे लोकतांत्रिक संसदीय संविधान के मूल सिद्धांतों के

अस्वीकरण
"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

Translated version. Not for Legal Use

> अनुरूप नहीं है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि संविधान निर्माताओं का यह आशय नहीं था कि उपधारा (3) एवं (5) को सम्मिलित करते समय नामांकन की शक्ति का उपयोग किसी मंत्री—और विशेष रूप से मुख्यमंत्री, जो मंत्रिपरिषद का प्रमुख होता है और जो विधानमंडल के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी है—को सदस्यता प्रदान करने के लिए किया जाए।"

न्यायालय ने आगे यह भी कहा कि— "इन दोनों उपधाराओं का उद्देश्य समझना कठिन नहीं है। प्रत्येक राज्य में ऐसे व्यक्ति होते हैं जिन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में विशिष्टता प्राप्त की होती है और जिनके अनुभव एवं परामर्श का लाभ राज्य की विधानमंडल के लिए अत्यंत मूल्यवान हो सकता है, किंतु उनके पास न तो समय होता है और न ही वे चुनाव लड़ने की इच्छा रखते हैं, और जनहित में यह भी उचित नहीं कि वे अपनी ऊर्जा राजनीतिक चुनावों में व्यर्थ करें। उदाहरणार्थ, राष्ट्रपति किसी प्रख्यात परमाणु वैज्ञानिक को सदस्य के रूप में नामित कर सकते हैं, ताकि परमाणु ऊर्जा के उत्पादन को नियंत्रित करने वाले कानून पारित करते समय विधानमंडल उनके विचारों का लाभ उठा सके। इसी प्रकार अनेक अन्य उदाहरण दिए जा सकते हैं, जैसे वे व्यक्ति जिनके पास साहित्य, विज्ञान, कला और सामाजिक सेवा के क्षेत्र में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव है। अनुच्छेद 171 की उपधारा (5) का उद्देश्य स्पष्ट रूप से यह था कि ऐसे व्यक्तियों को, जनहित में, विधानमंडल की सदस्यता प्रदान की जाए, ताकि उन्हें चुनाव लड़ने की आवश्यकता न पड़े। यह प्रावधान इस उद्देश्य से नहीं बनाया गया था कि कोई मंत्री, जो चुनाव में पराजित हो गया हो, नामांकन के माध्यम से 'पिछले दरवाजे' से विधानमंडल में प्रवेश कर जाए, या सत्तारूढ़ राजनीतिक दल, जिसकी शक्ति मतदाताओं के जनादेश पर आधारित है उस जनादेश का सामना किए बिना अपनी संख्यात्मक शक्ति बढ़ा ले।"

यदि किसी ऐसे व्यक्ति को, जो चुनाव हार चुका है या जिसके पास किसी विशेष क्षेत्र में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव नहीं है, सामान्य रूप से राज्यपाल द्वारा नामांकन के माध्यम से सदस्य बना दिया जाता है, तो यह न केवल उपर्युक्त संवैधानिक प्रावधानों के विपरीत अविवेकपूर्ण और अनुचित होगा, बल्कि संविधान के इस विशेष प्रावधान के उद्देश्य को भी विफल कर देगा। विधान परिषद के सदस्यों का नामांकन राज्यपाल तथा मुख्यमंत्री—दोनों द्वारा अत्यंत सावधानी एवं जिम्मेदारी के साथ किया जाना चाहिए, ताकि न्यायालय का हस्तक्षेप अपवादस्वरूप ही हो।

यह भी उल्लेखनीय है कि हर वह व्यक्ति, जिसने चुनाव लड़ा हो और हार गया हो, या जो पहले विधायक या मंत्री रह चुका हो, आवश्यक नहीं कि वह 'सामाजिक सेवा' के क्षेत्र में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव रखता हो। अनेक लोग राजनीति को एक पेशे के रूप में अपनाते हैं, जैसे चिकित्सा, विधि या शिक्षण। किंतु चिकित्सा, विधि या शिक्षण क्षेत्र के विशिष्ट व्यक्तियों को उनके संबंधित क्षेत्रों में विशेष ज्ञान या अनुभव के कारण नामित किया जाता है, न कि केवल इस आधार पर कि वे सामाजिक सेवा भी करते हैं—यद्यपि यह असंदिग्ध है कि डॉक्टर, वकील, शिक्षक आदि भी सामाजिक सेवा करते हैं।

"विशेष ज्ञान" और "व्यावहारिक अनुभव" शब्दों का स्पष्ट महत्व है, जिन्हें अनदेखा नहीं किया जा सकता और न ही सत्तारूढ़ दल की राजनीतिक इच्छाओं या किसी व्यक्ति की नामित होने की आकांक्षा के कारण इन पर पर्दा डाला जा सकता है। यह मान लेना भी उचित नहीं है कि प्रत्येक राजनेता के पास 'सामाजिक सेवा' के क्षेत्र में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव होता है। ऐसे विशेष ज्ञान या अनुभव का आकलन वस्तुनिष्ठ रूप से किया जाना आवश्यक है।

संभव है कि कोई राजनेता—चाहे वह निर्वाचित हुआ हो या नहीं—यदि उसके सामाजिक सेवा में योगदान को देखते हुए उपयुक्त पाया जाए, तो उसे विधान परिषद का सदस्य नामित किया जा सकता है। किंतु ऐसा नामांकन संविधान के अनुच्छेद 171 की उपधारा (5) के प्रावधानों के अनुसार ही किया जाना चाहिए, न कि केवल इस आधार पर कि उसने किसी समय कोई राजनीतिक पद धारण किया था। ऐसे व्यक्ति भी हो सकते हैं, जो राजनेता नहीं हैं और जिन्होंने कभी चुनाव नहीं लड़ा, फिर भी सामाजिक सेवा के क्षेत्र में उनका योगदान व्यापक रूप से मान्य एवं प्रशंसनीय हो—ऐसे व्यक्तियों को भी विधान परिषद का सदस्य नामित किया जा सकता है।

प्रस्तावित या किए गए नामांकन सत्तारूढ़ दल की राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं से प्रभावित नहीं होने चाहिए, बल्कि उन्हें इस प्रकार किया जाना चाहिए कि वे उस उद्देश्य की पूर्ति करें, जिसके लिए संविधान में नामांकन का यह विशेष प्रावधान किया गया है।

हालाँकि, हमें इस मामले में कोई ऐसा आधार, कारण या परिस्थिति नहीं मिलती, जिसके कारण यह न्यायालय कोई निर्देश या दिशानिर्देश जारी करे, क्योंकि जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, नामांकन करना राज्यपाल के विवेकाधिकार का विषय है, जिसमें न्यायालय पूर्व में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। साथ ही, नामांकन के लिए आवश्यक दिशानिर्देश स्वयं संवैधानिक व्यवस्था में निहित हैं, जैसा कि ऊपर उल्लेखित है, और हमें पूर्ण विश्वास है कि राज्यपाल नामांकन करते समय इनका सदैव ध्यान रखेंगे।

अस्वीकरण
"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"

Translated version Not for Legal Use

अतः, रिट याचिका का निस्तारण इसी प्रकार किया जाता है।

दिनांक: 22 मार्च, 2010
एम्एफए

Translated version. Not for Legal Use.

अस्वीकरण
"अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।"